हिंदी अनुशीलन

(पीयर रिव्यूड व यूजीसी केयर लिस्टेड जर्नल)

वर्ष 61 जुलाई–दिसंबर 2019 अंक 3-4 ISSN : 2249-930X

परामर्शदाता

प्रो. कमल किशोर गोयनका
प्रो. सुरेन्द्र दुबे
प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित

प्रधान संपादक

प्रो. नंदकिशोर पाण्डेय

संपादक

प्रो. नरेन्द्र मिश्र

संपादन सहयोग

डॉ. निर्मला अग्रवाल
प्रो. मीरा दीक्षित

भारतीय हिंदी परिषद्, प्रयाग

हिंदी अनुशीलन

(पीयर रिव्यूड व यूजीसी केयर लिस्टेड जर्नल)

ISSN : 2249-930X

प्रकाशक : डॉ. निर्मला अग्रवाल, प्रबंधमंत्री, भारतीय हिंदी परिषद्
हिंदी–विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
Website- www.bhartiyahindiparishad.com
Email-hindianusheelan@gmail.com

मूल्य : रु. 50.00

अक्षर संयोजन : राजेश शर्मा, मो. : 09450252918
मुद्रक : प्रभा कम्प्यूटर्स एण्ड प्रिंटर्स, विश्वविद्यालय मार्ग, प्रयागराज

अनुक्रम

1. विमर्श

प्रो. नंदकिशोर पाण्डेय 5

2. संवाद

St नरेंद्र मिश्र 16

3. रमेशचन्द्र शाह की आलोचना दृष्टि

डॉ. अखिलेश कुमार शंखधर 25

4. समकालीन हिंदी आलोचना का परिदृश्य

डॉ. नीलम राठी 30

5. कालजयी उपन्यास : आपका बंटी

डॉ. नीतू परिहार 39

6. [illegible]

डॉ. आशीष सिसोदिया 45

7. शेखर एक जीवनी : क्रांतिकारी व्यक्ति के स्वतंत्रता की खोज की कहानी

डॉ. उर्मिला सिंह 52

8. राग दरबारी का समाजशास्त्र

डॉ. विजय कुमार प्रधान *58*

9. राम करहु तेहि के उर डेरा

डॉ. राजकुमार उपाध्याय मणि *63*

10. मीरा के व्यक्तित्व कृतित्व की एक झलक

डॉ. अरविन्द कुमार जोशी 71

11. सूफी संतों की समन्वय साधना

डॉ. सत्यपाल तिवारी *79*

12. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की रचनाधर्मिता

डॉ. मुकेश कुमार *90*

13. हिंदी नाटक और अभिनेयता के प्रश्न

डॉ. सत्येन्द्र कुमार दुबे 95

14. कालजयी काव्य कृति कामायनी

डॉ. चन्द्रकान्त तिवारी 101

15. रामचन्द्रिका पर हनुमन्नाटक का प्रभाव

डॉ. राजेश कुमार गर्ग *112*

16. हिन्दू धर्म ग्रंथों के उर्दू अनुवाद

St अब्दुल हक *128*

17. जीवन की यथार्थपरक दास्तानगोई दरमियाना

डॉ. विमलेश शर्मा *132*

18. वैश्विक सदर्भ में श्रीमद्भागवद्गीता का योगदान

डॉ. दिग्विजय कुमार शर्मा *136*

19. लोकसाहित्य में पर्यावरण
डॉ. सुनील कुमार द्विवेदी 141
20. ठाकुर शिवप्रसाद सिंह के लोक–साहित्य में लोक–गीतों का महत्व
डॉ. बलजीत कुमार श्रीवास्तव 147
21. कनुप्रिया : संवेदना और शिल्प
डॉ. प्रतिमा यादव 152
22. भेड़िया, शहर और व्याकरण
डॉ. शिवप्रसाद शुक्ल 160
23. सांस्कृतिक अरुणोदय का कालजयी काव्य तुलसीदास
डॉ. अनिल राय 165
24. लोक लुभावनी भाषा–हमारी हिंदी
डॉ. वसुन्धरा उपाध्याय 173
25. औपनिवेशिक वामपंथी पाठ से तुलसीदास को आजाद करें
डॉ. सर्वेश सिंह 178
26. व्यक्ति–स्वातंत्र्य की विचारणा का प्रतिपादन है 'नदी के द्वीप'
डॉ. हरीश अरोड़ा 183
27. सुभद्रा कुमारी चौहान और उनका रचना संसार
डॉ. स्मृति शुक्ल 188
28. कालजयी कृति श्रीरामचरितमानस की समकालीन सार्थक–अर्थवत्ता (भव–विकार के विशेष संदर्भ में)
डॉ. विश्वजीत कुमार मिश्र 193
29. अरे यायावर रहेगा याद : अविस्मरणीय यात्रा वृतांत
डॉ. रमेश सिंह 198
30. नासिरा शर्मा को 'नासिरा' की नजर से जानना
डॉ. समीक्षा पाण्डेय 206
31. राजस्थान में राजनीतिज्ञों के उत्थान में हिंदी पत्रकारिता की भूमिका
रजनीश अग्रवाल 213
32. क्रांतिकारी रचना के संदर्भ में 'शम्बूक'
St दीपेंद्र सिंह जडेजा 218
33. शंकरदेव के रामविजय नाट में राम का स्वरूप : एक विशेष अध्ययन
डॉ. प्रीति वैश्य 225
34. बंजारों से संबंधित लोक साहित्य की विविध विधाओं का अध्ययन
महेन्द्र सिंह 233
35. निराला की कविताओं में राष्ट्रवादी स्वर
डॉ. मधुछन्दा चक्रवर्ती 241
36. प्रेमचन्दोत्तर युग के महिला उपन्यासकार
डॉ. वाणीश्री बुग्गी 248
37. जगदीश गुप्त का साहित्यिक प्रदेय
डॉ. सुजीत कुमार शर्मा 252

सांस्कृतिक अरुणोदय का कालजयी काव्य 'तुलसीदास'

डॉ. अनिल

जिन
रवींद्रना
सर्वश्रेष्ठ
कहते हैं
उन्होंने
जन 19
होने अ
में यहाँ
सख्या
'तुलसीदास
गे इन्हें
रचनाएँ
कारण 'तु
अभाव दि
की शक्ति
किन्तु मह
अपेक्षाकृत

हज
अधिक र
द्विवेदी ज

के पक्ष
हैं। पु
कृतियों
कल्पना
प्रशंसा
पढ़नी
अधिक
करने
जितना
लिखने

की गणना निराला की कालजयी
रों से सर्वाधिक प्रभावित रहे हैं
र आदि के नाम अग्रगण्य हैं। ये जा
वि मानते हैं यहाँ तुलसी उनकी दृष्टि में
ह निराला का तुलसीदास के प्रति असी
पर 'तुलसीदास' शीर्षक एक स्वतंत्र खण्
के 'सुधा' में लगातार पाँच भागों में छपी
भीर आरोप लगाया गया। 'सुधा के संपाद
 कहा कि 'सुधा' में इस कविता को छा
गयी है। इसी दुरूहता के कारण
और 'राम की शक्तिपूजा' को पांडित्यपूर्ण
विद्. अर्थों में महान रचना मानने में सं
ला के पांडित्य और परिश्रम का परिणाम
दास' और 'राम की शक्तिपूजा' में स्वाभा
पड़ता है। आचार्य बाजपेयी का कथन
और तुलसीदास को निराला की सर्वश्रेष्ठ
संचित अध्ययन निराला के अंतरंग की
 पांडित्य और परिश्रम का परिणाम है।"

द द्विवेदी की दृष्टि में निराला ने जहाँ
हुए। उनका मानना है कि निराला में
खते हैं-- "वे पंत की तरह अत्यधिक
काव्य–विधान में उन्हें वस्तु–व्यंजना का
का भी मौका मिल जाता है। इसीलिए
राम की शक्तिपूजा और सरोज स्मृति
इनमें भाषा का अद्भुत प्रभाव पाठक को
आवेगों के सामने फीकी लगती है।"[2] राम
ते में तभी होते हैं जब उन्हें इस रचना
असल डॉ. शर्मा को निराला–साहित्य
करता है। वकील रामविलास शर्मा
ा को तीन चार घंटे का श्रम करना
तुलसीदास' को लिखने में किया था

ा' की रचना प्रबंधात्मक धरातल पर

की जाती है। निराला
तुलसीदास तथा
को शुद्ध साहित्य का
साहित्य के महानतम
ही था जिसके कारण
लिख डाला। यह कविता
आलोचकों द्वारा हुई
भार्गव ने इसके विरुद्ध
'सुधा' के ग्राहकों को
नंददुलारे बाजपेयी
श्रेणी में रखते हैं और
हैं। उनकी दृष्टि में ये
दुरूहता और पांडित्य के
र मार्मिकता का उन्हें कुछ
कतिपय समीक्षकों ने इस
कहकर विज्ञापित किया है
नहीं। एक तरह से यह

प्रयोग किये उसमें वे
वैयक्तिकता नहीं है।
कवि नहीं हैं। बड़े
र मिलता है और कल्पना
निराला अधिक–सफल हुए
कविताएँ उनकी सर्वोत्तम
व्यस्त बनाए रखता है।
शर्मा भी 'तुलसीदास' की
पर्याप्त अनुगूंज सुनाई
और सांस्कृतिक स्वर
प्रथम छंद को तैयार
उनके अनुसार निराला ने
क किसी और कविता के

इस कविता में भारत के

संस्कृतिक सकट
तुलसीदास रचना
कविता के भीतर
है कि कविता
विद्यमान हैं। इस
कि--चरित नायक
भिन्न अर्थस्तर
दिखती है ,जहाँ
हो

भारतीय
द्वारा बडे ही
और समाज के
पराधीनता होती
वाली होती है।
जाती है बल्कि
भी उनमें भरपूर ह
पड़ता है। उन्होंने
उपस्थित किया

के शीर्ष कवि के आत्मसंघर्ष
नायक तुलसी का युगीन प
कहीं न कहीं ब्रिटिश काल के
और निराला एक साथ अपने--अपने युगीन संघर्षों के साथ
में प्रसिद्ध आलोचक डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का कथन है
र्ग में रचना का तात्कालिक परिवेश मुगल काल का है पर एक
आधुनिक भारत में अंग्रेजों की दासता के काल में प्रक्षिप्त
ी भूमिका में जैसे निराला स्वयं अपने को परिकल्पित कर रहे

प्रदान किया गया है।
ल काल का है किंतु
भारत का भी है। स्पष्ट

ी एक बड़ी विशेषता यह रही है कि इसमें चिंतकों–मनीषियों
से यह चिंहित किया गया कि राजनीतिक पराधीनता तो देश
ादायक है ही, उससे भी कहीं अधिक पीड़ादायक सांस्कृतिक
भीतर ही भीतर समूचे राष्ट्र और समाज को खोखला कर देने
इस सांस्कृतिक दासता के प्रति गहरी चिंता निराला में देखी
से संघर्ष और तत्पश्चात इससे मुक्ति तक पहुँचने का उद्यम
की इस प्रवृत्ति का परिणाम 'तुलसीदास' में साफ दिखायी
में भारतीय सांस्कृतिक पराभव का जो प्रभावशाली चित्र
स्वय में अद्भुत है–

दुख, अब सुख–स्वरित जाल
यह केवल–कल्प काल
– कुमुद–कर–कलित ताल पर चलता
की छवि मृदु–मन्द–स्पन्द
गति नियमित–पद ललित–छन्द;
कोई, जो निरानन्द कर मलता।[4]

मुगल शासन
इस तूफानी वर्षा
देश अपनी
डूब चुका है। इस
पराभव और
अपने युग के
बराबर है। भारतीय
चारों ओर छिटक
तरफ अनायास
है–'यों इस प्रवाह
स्तरों पर देखी ज
बैठती है उतनी
भूमंडलीकरण के
संघर्ष किया ही
यह संघर्ष ब्रिटिश

थापना हो चुकी है। उनके आक्रमण रूपी वर्षा अब थम गयी है।
समूचे देश में एक विशेष प्रकार
तेजोमयता को विस्मृत कर भौतिक दि
में कोई – कोई ऐसा भी अवश
को देखकर व्यथित हो रहा है
रहे हैं, अतः सांस्कृतिक दुर्दश
का सूर्य अस्त हो चुका है और
इस्लामी संस्कृति की नदी में भार
जा रहा है। इसका निराला ने ब
मूल को बहता।' इस छंद में नि
है। भारत के विषय में यह उक्ति
देश काल में भी और लगभग
। भारतीय संस्कृति ने अपने वजू
के 'तुलसीदास' की आरंभिक पंक्ति
ाद के युग में भी उसी प्रकार

शांति छा गयी है। मुग
ता के गहन अंधकार में
ो भारतीय संस्कृति के
सों और निराला दोनों
अपनी बेचैनी दोनों में
ी संस्कृति की चाँदनी
नमानस बेबस पुष्प की
सशक्त चित्रण किया
ार्थ की व्यंजना अनेक
ी मध्यकाल में सटीक
सीमा तक वर्तमान
लेकर मध्यकाल में तो
स्पष्ट है। संस्कृति का
। आज के भूमंडलीकृ

इस युग में भी अमेरिकी संस्कृति का साम्राज्यवाद बड़े ही सुनियोजित तरीके से भारत जैसे तीसरी दुनिया के देशों को उदारवाद की आड़ में अपने उपनिवेश के रूप में बदल रहा है। इस दृष्टि से यदि तुलसीदास की पंक्ति–'यों इस प्रवाह में देश मूल खो बहता' का अर्थ खोला जाय तो यह पंक्ति निश्चित रूप से वर्तमान परिस्थितियों को अधिक उजागर करता दिखायी पड़ता है। 'तुलसीदास' कविता की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि इसमें अपनी संस्कृति की चिंता के साथ अपने 'स्व' को हासिल करने का रचनात्मक संघर्ष विद्यमान है।
इस कविता की यही खासियत इसे एक बड़ी कालजयी रचना के रूप में प्रतिष्ठित करती है।

'तुलसीदास' कविता कथात्मक स्तर पर कुल तीन भागों में विभक्त है प्रथम भाग में मुगलकालीन भारतीय संस्कृति के पराभव के चित्र अंकित हैं। मुगलों के आक्रमण से छिन्न–भिन्न भारतीय संस्कृति, इसकी दुर्दशा और अंततः इस्लामी संस्कृति का देशव्यापी प्रसार इस भाग में दर्शित है। इन्हीं परिस्थितियों में तुलसी का उदय होता है। कविता के द्वितीय भाग में तुलसी के अपने मित्रों के साथ चित्रकूट दर्शन की घटना का वर्णन है। चित्रकूट की प्रकृति उन्हें जड़ देश में चेतना के संचार का संदेश देती प्रतीत होती है। निराला प्रकृति संवेदना और स्वाधीनता के बड़े कवि हैं। उन्होंने एक कविता 'स्वाधीनता पर' शीर्षक से लिखी थी जिसमें उनकी इस भावना को पूर्ण विस्तार मिला है–

भ्रमर का गुंजार /वह भी स्वाधीन .
पक्षियों का कलरव /वह भी स्वाधीन,
उदय अस्त दिनकर का,/ तिमिर हर के अंतर से–
तिमिर का उद्गम/और तन के हृदय से
निशानाथ का प्रकाश,/सब हैं स्वाधीन ...
मेरे साथ मेरे विचार मेरे जाति- /मेरे पद दलित
मौन हैं– निद्रित हैं
स्वप्न में भी पराधीनता/कितनी बड़ी दुर्बलता !'[5]

इसी प्रकार 'तुलसीदास' में भी प्रकृति का कण–कण अपने अस्फुट स्वरों में तुलसी को झकझोरने का प्रयास करता है और कवि को अपनी अंतश्चेतना से साक्षात्कार करने की प्रेरणा भी देता है–

कहता प्रति जड़, जंगम जीवन!
भूले थे अब तक बंधु, प्रमन ?
यह हताश्वास मन भार श्वास भर बहता ,
तुम रहे छोड गृह मेरे कवि,
देखो यह धूल–धूसरित छवि,
छाया इस पर केवल जड़ रवि ज्वर दहता।[6]

यहाँ चित्रकूट की जड़ प्रकृति भी मुखर हो उठती है। प्रकृति का मौन संदेश सुनकर तुलसी को यह आभास होने लगता है कि इस समय प्रकृति का समूचा सौंदर्य धूल–धूसरित हो रहा है। उसकी समस्त आभा सूर्य की तीव्र किरणों से जल चुकी है।

प्रकृति में अब जीवन शेष नहीं रह गया है। चित्रकूट भारतीय संस्कृति के मूल्यों का पूंजीभूत रूप है जिसके आख्यान के माध्यम से ही तुलसीदास ने रामचरितमानस जैसी उत्कृष्ट रचना लिखकर भारतीय मूल्यों की पुनःस्थापना का सफल प्रयास किया। चित्रकूट की प्रकृति तुलसी के समक्ष कहती है कि भारत की यह पावन व गौरवपूर्ण धरती आक्रमणकारी मुगलशासकों द्वारा प्रतिक्षण रौंदी जा रही है। समूचा देश अपना सर्वस्व भूलकर विलासिता की सरिता में अनायास ही बह रहा है। अब इस देश का सांस्कृतिक उत्थान किसी त्यागी–तपस्वी के द्वारा ही हो सकता है। स्पष्ट है कि इन पंक्तियों में निराला उजाड हो रही प्रकृति के बहाने तत्कालीन एवं आधुनिक कालीन भारतीय संस्कृति के पराभव की ओर संकेत करना चाहते हैं। प्रकृति में भारतीय संस्कृति की अवनति की ओर तुलसी का ध्यान खींच कर निराला देश के सांस्कृतिक पुनरुत्थान के महती उद्देश्य को सामने लाने का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार भारत की संस्कृति का पराभव तुलसी को गंभीर रूप से उद्वेलित करता है। उनका विवेक इस निर्णय पर पहुँचता है कि सांस्कृतिक दासता के इस घुप्प अंधकार से देश और समाज को निकालने का कुछ न कुछ उपाय अवश्य करना होगा। इस अंधकार से बाहर आये बिना भारतीय संस्कृति के सूर्य की आभा पुनः प्रसरित नहीं हो सकेगी। तुलसी मन ही मन ठान लेते हैं कि

करना होगा यह तिमिर पार–

देखना सत्य के मिहिर–द्वार–

बहना जीवन के प्रखर ज्वार में निश्चय–

लड़ना विरोध से द्वन्द्व–समर

रह सत्य मार्ग पर स्थिर निर्भर–

जाना भिन्न भी देह, निज घर निःसंशय।[7]

सत्य का साक्षात्कार करने के लिए अन्धकारपूर्ण कुहासे को चीरना होगा। उस सत्य का संधान करना होगा जो भारतीय संस्कृति का प्राणतत्त्व है और जिसे इस नयी संस्कृति ने ग्रस लिया है। सत्य साक्षात्कार का यह संघर्ष अत्यंत चुनौती भरा होगा तथा अपना सर्वस्व इस संघर्ष में होम करने के लिए तत्पर रहना होगा। निराला संघर्ष के कवि हैं इसके बिना उनकी रचनाएँ अपने उत्कर्ष तक नहीं पहुँचतीं। संघर्ष में विजय–प्राप्ति का उनका दृढ़ निश्चय सभी प्रतिकूल परिस्थितियों से टकराता है और उन्हें अनुकूल करना वह भली–भाँति जानता है। उपर्युक्त छंद में कवि जिस तिमिर को पार करने का निश्चय करता है, वह सांस्कृतिक पतन का तिमिर है। इसके अलावा उसे जिस सत्य के मिहिर–द्वार तक पहुँचना है वह भारतीय संस्कृति का उच्चतम बिंदु है। इस प्रकार समूची कविता में अंधकार के प्रति प्रकाश के संघर्ष की पूरी अंतर्धारा पूरे उत्साह के साथ विद्यमान है। ब्रिटिशकालीन भारत में जब यह कविता लिखी गयी उस समय देश में साम्राज्यवादी शोषण और अन्याय का प्रकोप तो था ही सांस्कृतिक संकट का घना अंधकार भी व्याप्त था। गाँधी के नेतृत्व में देश उस अन्यायी व्यवस्था से मुक्त होने की लंबी लड़ाई लड रहा था। भारतीयों की यह लड़ाई सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक तीनों ही मोर्चों पर एक साथ लड़ी जा रही थी जिसका प्रभाव 'तुलसीदास' कविता पर साफ देखा जा सकता है।

देश को सांस्कृतिक जडता से मुक्त कराने के दृढ़ निश्चय के उपरात ही तुलसी को अपनी पत्नी रत्नावली की छवि याद आ जाती है। चित्रकूट की जो प्रकृति अब तक उन्हें

ऊर्ध्वगामी बनाकर मुक्ति की प्रेरणा प्रदान कर रही थी वही अब रत्नावली के रूप–सौंदर्य में अटक कर पूरी तरह उसमें रँग गयी जान पड़ती है–

प्रेयसी, प्राणसंगिनी, नाम
शुभ रत्नावली सरोज–दाम
वामा, इस पथ पर हुई वाम सरितापम।[8]

लक्ष्य–प्राप्ति के मार्ग में बाधाओं का आना जीवन के यथार्थ की ओर संकेत करता है। तुलसी का मन जब चेतना के उच्चतम बिंदु पर पहुँचता है ठीक उसी समय रत्नावली की स्मृति मोहिनी रूप धरकर उनके मानस को आच्छादित कर लेती है। उनका मन चेतना के शीर्ष से अब धीरे–धीरे नीचे उतरता है। अब रत्नावली की केशराशि में उन्हें नीलगगन दिखायी देने लगता है। 'बंध के बिना कह कहाँ प्रगति ?' कहकर भौतिक प्रेम में उलझे तुलसी इस विचार की गहराई में उतरते चले जाते हैं कि शारीरिक भोग के बिना भला वास्तविक सुख कहाँ प्राप्त हो सकता है? बंधन और भोग मानव जीवन के अनिवार्य अंग हैं। इनके बिना जीवन का महत्त्व ही क्या है। इसे उचित ठहराते हुए तुलसी का मन यह मानने लगता है कि भौतिक भोग–विलास से होता हुआ मनुष्य मुक्ति के द्वार तक पहुँच सकता है। दरअसल यहाँ तुलसी की मनःस्थिति उस मोहासक्त व्यक्ति की हो गयी है जो अपनी कामनाओं को उचित सिद्ध करने के लिए अनेक प्रकार के तर्कों की तलाश करता है। तुलसी अब यह कहते हैं कि जिस प्रकार अपनी सुगंध और सौंदर्य से बँधा पुष्प अपनी उपस्थिति को दूर–दूर तक व्याप्त कर देता है, ठीक उसी तरह वे भी अपनी प्रिया के प्राण–सौंदर्य में बँधकर मुक्ति प्राप्त कर लेंगे–

"जिस तरह गन्ध से बँधा फूल,
फैलता दूर तक भी, समूल
अप्रतिम प्रिया से, त्यों दुकूल–प्रतिमा में
मैं बँधा एक शुचि आलिंगन,
आकृति में निराकार, चुंबन
युक्त भी मुक्त यों आजीवन, लघिमा में।"[9]

पत्नी के काम–सौंदर्य में आसक्त तुलसी के भीतर का द्वंद्व यहाँ साफ देखा जा सकता है। यही द्वंद्व उन्हें उस बिंदु पर ला खड़ा करता है जहाँ से मुक्ति हेतु उन्हें भोग का मार्ग सूझने लगता है। इसी बीच उनकी अनुपस्थिति में रत्नावली अपने भाई के साथ मायके चली जाती है। तुलसी जब घर लौटते हैं तो पाते हैं कि रत्नावली घर में नहीं है। घर का वातावरण बिल्कुल बदल गया है। वह घर अब घर नहीं रहा जिसे तुलसी छोड़ कर गये थे–

यह नहीं आज गृह, छाया–उर,
गीति से प्रिया की मुखर, मधुर ;[10]

प्रेमासक्त तुलसी अपनी प्रिया को पुनः देखने के लिए व्याकुल हो जाते हैं। लोक मर्यादाएँ उन्हें रोक नहीं पातीं और वे ससुराल चल पड़ते हैं। तुलसी का समय मध्यकाल का वह समय था जब बिना बुलाए कोई व्यक्ति ससुराल नहीं जाता था। तुलसी के इस प्रकार ससुराल में पहुँचने पर रत्नावली की भाभी ने जो व्यंग्योक्तियाँ कहीं उनसे रत्नावली

का हृदय विंध गया –'जल गए व्यग्र से सकल अग/, चमकी चल–दृग ज्वाला–तरंग।' अज्ञानता और मोहपाश में बँधे तुलसी का सामना जब रत्नावली से हुआ तब उन्हें मायके में अपमानित पत्नी का एक अद्भुत रूप दिखायी पडा: तुलसीदास' का यह प्रसंग पूरी कथा का क्लाइमेक्स (चरम बिंदु) है। मायके के तानों से जली–भुनी रत्नावली तुलसी पर बरस पडती है–

"धिक ! धाये तुम यों अनाहूत,
धो दिया श्रेष्ठ कुल–धर्म धूत,
राम के नहीं, काम के सूत कहलाये !"[11]

छंद को पढकर बरबस ही तुलसी के जीवन से संबंधित यह दोहा याद आ जाता ! जो अत्यंत प्रसिद्ध है-

लाज ना लागत आपको दौरे आयहुँ साथ !
धिक–धिक ऐसे प्रेम को, कहा कहूँ मैं नाथ !

तुलसीदास में निराला ने मानो इसी लोकप्रसिद्ध दोहे का रूपांतरण मात्र कर दिया है। पत्नी के प्रहार से तुलसी की चेतना झंकृत हो उठी उनके संस्कार पुन: ऊर्ध्वगामी हो गये यहाँ से तुलसी एक नये अवतार में दिखायी पडते हैं। उनके भीतर की काम–वासना भस्म हो गयी और रत्नावली अब उन्हें 'अनल–प्रतिमा के रूप में दिखायी पडी जो स्वयं ज्ञानस्वरूपा सरस्वती हैं। रत्नावली में माँ शारदा को देखकर तुलसी के भीतर की सारी जडता समाप्त हो जाती है और सर्वत्र ज्ञान का आलोक फूटने लगता है। ज्ञानालोक में स्नात तुलसी की दृष्टि माँ शारदा से बँध जाती है और इस प्रकार उनकी चेतना ऊर्ध्वमुख से ऊर्ध्वतर होती चली जाती है–

दृष्टि से भारती से बँधकर
कवि उठता हुआ चला ऊपर;
केवल अम्बर–केवल अम्बर फिर देखा।[12]

साधना की इस अंतिम अवस्था में तुलसी स्वयं ज्ञान की प्रतिमा बन जाते हैं। उनकी संपूर्ण दृष्टि ध्यान की अवस्था में चली जाती है। उनके ज्ञान की समस्त ऊर्जस्विता अपने ही प्राणों में केंद्रित हो जाती है–

जिस कलिका में कवि रहा बन्द,
वह आज उसी में खुली मन्द,
भारती–रूप में सुरभि–छन्द निश्रश्रय।[13]

निराला का वेदांत दर्शन से काफी गहरा रिश्ता रहा है। वे इस सत्य को भलीभाँति जानते थे कि ज्ञान का मूल स्रोत व्यक्ति की अपनी आत्मा के भीतर ही निहित रहता है। उस मूल स्रोत तक पहुँचने और अपने 'स्व' के साक्षात्कार हेतु उसे साधना और संघर्ष करने की जरूरत होती है। इसी 'स्व' का शोधन उन्होंने राम की शक्तिपूजा में भी किया है। इस प्रकार अज्ञानता की गहन अंधेरी रात्रि के व्यतीत होने के बाद ज्ञान का नया प्रभात तुलसी के जीवन में आता है। वस्तुत: ज्ञान और अज्ञानता का संघर्ष सनातन काल से चला आ रहा संघर्ष है। यह संघर्ष मनुष्य के भीतर और बाहर दोनों स्तरों पर चलता है जिससे गुजर कर ही मनुष्य लक्ष्य की प्राप्ति कर पाता है। निराला द्वारा प्रस्तुत इस

संघर्षगाथा में तुलसी के पक्ष में माँ शारदा और दूसरी ओर कता और अज्ञानता की प्रतीक सबल हाथों वाली माया है। यहाँ भी कवि द्वारा 'राम शक्तिपूजा' की तरह ही युद्ध का रूपक अत्यंत प्र [redacted] ढंग से बाँधा गया है जो ला की महान आत्मजयी रचनाओं का प्राणतत्त्व है। ज्ञान की जागृति और अज्ञानता जड़ता के मध्य कठोर संघर्ष तुलसीदास के अंतर्मन में भी चलता है और बाहर भी। तो निराला लिखते हैं–

"होगा फिर से दुर्धर्ष समर
जड़ से चेतन का निशिवासर,
कवि का प्रति छवि से जीवनहर,जीवन–भर;
भारती इधर, हैं उधर सकल
जड़ जीवन के संचित कौशल
जय, इधर ईश, हैं उधर सबल माया–कर

'तुलसीदास' के माध्यम से निराला की दलितों–उपेक्षितों प्रति गहरी संवेदना भी बड़े ही धारदार रूप में प्रकट हुई है। तुलसी के अनुसार ाजिक व्यवस्था में दोष वर्ण–संबंधों में अपेक्षित असंतुलन के कारण है। इस ऐतिहा ं सत्य को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि उच्च वर्णों के अन्याय से पीड़ित कर शूद्रों ने बडी संख्या में इस्लाम को अपनाया था। यह सच तुलसी का आँखों देखा था। तुलसी की सम्पूर्ण चिंता देश की सांस्कृतिक पुनरुत्थान की है जो मौजूदा परिस्थिति ों में संभव नहीं है –

इसके भीतर रह देश–काल
हो सकेगा न रे मुक्त–भाल,
पहले का–सा उन्नत विशाल ज्योतिः सर ।[15]

जो भारतीय अज्ञानतावश विभिन्न जातियों, संप्रदायों, गादों तिवादों में विभक्त होकर एक दूसरे के शत्रु बने हुए हैं, तुलसी की यह चेतना अब उनका समन्वय करेगी और उनके उत्थान में लीन हो जाएगी। उन्हें जीवन का अंतिम लक्ष्य मिल गया है। निराला और तुलसीदास दोनो के विषय में यह कहा जा सकता है कि वे दोनों देशकाल के शर से बिंधे हुए कवि हैं। दोनों ही सजग, सचेष्ट और युगदृष्टा साहित्यकार हैं। इसीलिए उनकी दृष्टि समय के आरपार जाती है, जो कि उनकी साहित्यिक प्रकृति के नितांत अनुरूप है तुलसीदास की ये अंतिम पंक्तियाँ लक्ष्य–संधान की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं जिनमें तुलसी का पत्नी रत्नावली के प्रति कृतज्ञता व्यक्त हुई है––

जगमग जीवन का अंत्य भाष
"जो दिया मुझे तुमने प्रकाश
अब रहा नहीं लेशावकाश रहने का;
मेरा उससे गृह के भीतर;
देखूँगा नहीं कभी फिरकर,
लेता मैं, जो वर जीवन–भर बहने का।"[16]

इस प्रकार 'दुर्धष समर' में विजय प्राप्तकर ज्ञान के सरोवर में स्नात तुलसी अपनी रचनाधर्मिता से संसार के महानतम कवि के रूप में प्रतिष्ठित हो जाते हैं।

'तुलसीदास' कविता का आरंभ भारतीय संस्कृति के सूर्यास्त से होता है I सांस्कृतिक पराभव की अंधकार पूर्ण परिस्थितियों से व्याकुल कवि तुलसी अपनी अंतस्साधना में उसी प्रकार लीन होते हैं जैसे 'राम की शक्तिपूजा' में राम द्वारा शक्ति की साधना सम्पन्न होती है। दोनों ही कविताओं में नायकों का आंतरिक संघर्ष अपने चरम तक पहुँचता है। यह संघर्षगाथा अपराजेय निराला के कविकर्म की निजी पहचान है I 'तुलसीदास' कविता का अंत सांस्कृतिक सूर्योदय से होता है और यही निराला का अभीष्ट भी है I निस्संदेह यह कविता युग और काल की सीमाओं का अतिक्रमण करती हुई आधुनिक युगीन सांस्कृतिक संकट और तत्जन्य संघर्ष के अनेक आयामों को भी उद्घाटित करती है I तुलसीदास निस्संदेह हिंदी की कालजयी कृतियों में स्वतः प्रतिष्ठित रचना है I

संदर्भ :

1. नंदकिशोर नवल, निराला कृति से साक्षात्कार, राजकमल प्रकाशन,2009, पृष्ठ–83.
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास, राजकमल प्रका.,1990, पृष्ठ–246.
3. रामस्वरूप चतुर्वेदी, प्रसाद निराला अज्ञेय, लोकभारती प्रकाशन,1989, पृष्ठ–77.
4. नंदकिशोर नवल, निराला रचनावली 1. राजकमल प्रका.,1992, पृष्ठ–283.
5. वही, पृष्ठ–132.
6. वही, पृष्ठ–285.
7. वही, पृष्ठ–289
8. वही, पृष्ठ–290.
9. वही, पृष्ठ–294.
10. वही, पृष्ठ–299.
11. वही, पृष्ठ–303.
12. वही, पृष्ठ–303.
13. वही, पृष्ठ–304.
14. वही, पृष्ठ–305.
15. वही, पृष्ठ–288.
16. वही, पृष्ठ–307.

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी–विभाग
श्यामलाल कॉलेज सांध्य, दिल्ली विश्वविद्यालय
दूरभाष : 9810379859